

ग्रंथमालाके दूस्ती

श्री भ्रमवीर सर सेठ भागचंदजी सोनी अध्यक्ष.

श्री सेठ ठाकोगदास पानाचंदजी जोहोरी उपाध्यक्ष.

श्री सेठ गोविंदजी रावजी दोशी, कोषाध्यक्ष.

श्री पं. वर्धमान पार्श्वनाथ झाखी, मंत्री.

श्री सं. भ. शि. सेठ गेंदमळजी जोहोरी बंधू.

श्री सेठ चंदुलाल फस्तुरचंद शाह बंधू.

श्री तनमुखलालजी काळा नांदगांव.

विश्ववंद्य महर्षि आचार्य कुंथुसागरजीका अमरजीवन.

परमपूज्य चारित्रचक्रवर्ति आचार्य शतिसागर महाराजके अनेक प्रभावक शिष्योंमें आचार्य कुंथुसागरजी अलौकिक तेजकी प्रकट कर गये, इसमें कोई संदेह नहीं। आचार्यश्रीको अपने इस शिष्यसे विशिष्ट प्रभावनाकी आशा थी। मामूली पढे लिखे एक साधारण कृषि व्यवसायमें व्यस्त पुरुष अरने अल्पव-साय, लगन व सतत परिश्रमसे अल्पकालमें इतने महान् पुरुष साबित हुमा यह आश्चर्य उत्पन्न किये बिना नहीं रह सकता है। आचार्यश्रीने आपको मुनिदीक्षाके बाद कुंथुसागर नामाभिधान किया। शायद इसमें भी कोई गूढ सन्निवेश हो। तीर्थकर परंपरामें भी शतिसागरके बाद कुंथुनाथका ही तीर्थ आया था। परंतु देवचक्र तो देवतत्वसे उभेष्ठित साधु संतोंके प्रति भी अपना प्रभाव दिखाये बिना नहीं छोड़ता है। कुछ ही समयके लिए क्यों न हों इस महापुरुषने अरने सुयोग्य गुरुके सुयोग्य शिष्यत्वको सिद्ध किया। इसमें कोई संदेह नहीं है।

विश्वोद्धार—आरके हृदयमें विश्वोद्धारकी भावना कूट कूटकर मरी हुई थी। आप इस बीतसाग शासनको विश्वधर्म सिद्ध करदेना चाहते थे। यही कारण है कि आपने कुछ ही समयमें अरने पुण्यविहारसे जनसाधारणकी दृष्टि इस ओर आकर्षित कर लिया था। सर्व साधारणका अनुराग जनधर्मके

प्रति उत्पन्न होगया था। और वीतराग धर्मसे जैनतर समाज भी प्रभावित हुआ था। क्या जैन, क्या बौद्ध, क्या हिंदू व क्या मुसलमान सभी आचार्यश्रीके मक्त बनगये थे। आचार्यश्रीका जीवन कुछ समय और होता तो अवश्य ही वे इसे एक प्रभावक धर्म सिद्ध करते।

नरेंद्रवंशधरत्व—अनेक नरेश आपके पदकमलके परमभक्त बने थे। बड़ोदा राजधानीमें आपका शानदार स्वागत राजकीय छवाजमेके साथ हुआ। प्रधान मिनिस्टरकी उपस्थितिमें आपका सार्वजनिक उत्सववेश हुआ था। गुजरात व बागडके पायः सर्व नरेश आपके परमभक्त थे। अजुवा, टीवा, ओराण, बलासणा, सुदासबा, पेथापुर, डूंगरपुर, वांसवाडा, मोहनपुर, आदिके नरेश आपका उपदेश सुनने के लिए सदा लालायित रहते थे। इन राजघरानोमें जैनधर्मके प्रति एवं जैनसाधुओके प्रति अनुराग उत्पन्न होनेमें आचार्यश्रीकी आत्मा ही प्रधान कारण है। अनेक राजयोमें आचार्यश्रीके जन्मदिनके उपलक्ष्य में अर्धिसा दिन मनानेकी शाही घोषणा हो चुकी है। वहांपर आचार्यश्रीके जमरजीवनकी ज्योति आचंद्रार्क स्थिररूपसे प्रज्वलित होती रहेगी।

ग्रंथनिर्माणः—आपने विश्वहितके लिए केवल उपदेशके द्वारा प्रयत्न नहीं किया है, किंतु ग्रंथनिर्माण कर युगयुगांतरमें भी विश्व कल्याणका संदेश विश्वके सामने स्थिर रखनेका प्रयत्न कार्य किया है। आपकी ग्रंथनिर्माणशैली, अत्यंत सरल व सुखविर्ण है। अःराटवृद्ध आपके ग्रंथोंको समझ सकते हैं।

विषय अत्यंत महत्वके होनेपर भी सरल व अनेक उदाहरणोंसे स्पष्टीकृत होनेके कारण प्रत्येक व्यक्ति ठसुकताके साथ उनका स्वाध्याय करते हैं। आचार्यश्रीकी यह देन जैन संसारके लिए ही नहीं, सारे संसारके लिए एक अलौकिक चीज रहेगी। पूज्यश्रीने बोधामृतसार, ज्ञानामृतसार, यावकपतिक्रमण, मुनि-प्रतिक्रमण, मुनिधर्मप्रदीप, भावत्रय फलपदर्शी, शांतिसुधासिंधु आदि अनेक ग्रंथोंकी रचना कर स्वाध्याय प्रेमियोंके प्रति अनंत उपकार किया है। इस प्रकार पूज्यश्रीने कुछ ही समयमें संसारका अपार उपकार किया है। आपने गुजरात, व बागडके उद्धारके लिए जो प्रयत्न किया था वह युगयुगांतरमें भी विस्मृत नहीं होसकता है। आज भी बागड व गुजरातमें मरुगण आपके विमोगसे विह्वल होरहे हैं। ऐसे गुरु हमें कब दर्शन देंगे, यह भावना प्रत्येक भावुकके हृदयमें उत्पन्न होरही है।

आपकी धीतरागता, परमनिस्पृह शांतवृत्ति, तेजोमय मूर्ति, गंभीर विचारधारा, वैराग्यमय दिव्यकाय आदि आत्मोंसे कभी ओझल नहीं हो सकते हैं। आपका भौतिकशरीर यहांपर न रहनेपर भी आपके अमरजीवनकी जागृत ज्योति इस संसारमें ज्यों का त्यों प्रज्वलित है। संसार आपके परोक्ष चरणोंमें श्रद्धांजलि समर्पण करनेमें अपनेको धन्य मानेगा।

प्रकृतग्रंथः—आचार्यश्रीकी स्मृतिमें चरनेवाली श्रीआचार्य कुंथुसागर ग्रंथमालासे अभीतक करीब ४४ ग्रंथ प्रकाशित होचुके हैं। वर्तमानमें जैनदर्शनके महान् सार्विकशिरोमणि महर्षि

विद्यानंद स्वामीके द्वारा विरचित तत्त्वार्थश्लोकवार्तिकालंकार ग्रंथका प्रकाशन संस्थासे होरहा है। उक्त ग्रंथके ४ खंड तो प्रकाशित होचुके हैं, ३ खंड और प्रकाशित होंगे। उक्त ग्रंथसे आज विद्वत्संसारका भारी उपकार होरहा है।

उस महान् प्रकाशनके बीचमें यह प्रकाशन सामान्य पाठकों को लाभप्रद होगा।

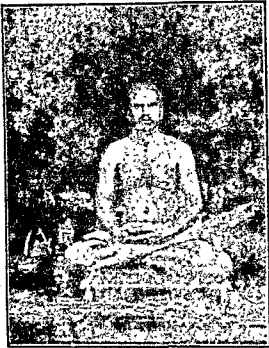
पूज्य स्व. आचार्यश्रीके संकेतसे ही लघुज्ञानामृतसारका काव्यमय भाषांतर कराया गया था। अनेक कारणोंसे उक्त पुस्तकका अभीतक प्रकाशन नहीं हो पाया। अब हम उसे प्रकाशित कर रहे हैं।

इसी प्रकार आचार्यश्रीके परमशिष्य त्यागी धर्मसागरजीने कुंतुसागरपचीसीके नामसे २५ गायनोंसे आचार्यश्रीका गुणगान किया है। उसे भी हमने इसीके साथ प्रकाशित किया है।

इसके अलावा चारित्रचक्रवर्ति विश्वबंध स्व. आचार्य शांति-सागर महाराज का भक्तिमसंदेश जो यमसल्लेखनाके समय ध्वनि-मुद्रित किया गया है, वह भी इस पुस्तकमें मूळ-मराठी और हिंदी भाषांतर के साथ दिया गया है। इसे मनन कर भग्यात्मा कल्याणपथमें अग्रसर होंगे ऐसी आशा है।

विनीत—

वर्धमान पार्श्वनाथ शास्त्री,
 ऑ. मंत्री आचार्य कुंतुसागर ग्रंथमाला
 कल्याणमवन, सोलापुर



श्री विश्वंघ्र आचार्य कुंथुसागाजी महाराज

श्री. १०८ आचार्य श्री कुंड्युसागर महाराजराचित

लघुज्ञानामृतसारका हिन्दीपद्यानुवाद

विद्याके जो मस्तर प्रमाकर जिनसे दीप्त त्रिलोक बढोक ।
कर्म कषाय जीतनेवाले, जो हैं अमय अमय अशोक ।
उनके चरणोंमें नमस्तक—हो, यह लघुज्ञानामृतसार ।
रचते हैं गुरु होवे जिससे अखिल विद्यमें ज्ञान प्रसार ॥ १ ॥

भ्रामक इन शुभ अशुभ क्रियाओंमें मैं अवतक रमा रहा ।
सुख दुःख पुण्य पापमय होकर विध्वंसिनिमें भ्रमा रहा, ।
पर ये शुद्धिविद्यामक स्वामिन् । मिले आपके पद हैं आज, ।
लिया आज है आश्रय इनका भिटे शुभाशुभ कर्म समाज ॥ २ ॥

हो, हे कुंड्य ममो अब मुझको इन चरणोंसे इतनी प्राप्ति ।
और मुझे न माचना करनी, करनी है संसार समाप्ति ।
शिवसुखकी हो सिद्धि स्वात्म उपलब्धि और परिणाम विशुद्धि ।
मिले समाधि अन्तमें मुझको विश्वव्यापिनी हो मम बुद्धि ॥ ३ ॥

इस मानवको भोगविवासा देती है जो उत्कृष्ट क्लेश ।
व्याघ्रसिंह नरनारि राहु वा केतु नहीं दे सकते लेश ।
गज, तुरंग या अग्नि सर्प या वैरी वर्ग आधि या व्याधि ।
वैसा दुःख न दे सकते हैं आपद, मृत पिशाच उपाधि ॥ ४-५ ॥

इन्द्र महेन्द्र आदिके वैभव-प्राप्त हुवे जो चारवार ।
उपसे भी भोगेच्छा नरकी शांत हुई न कमी दुस्कार, ।

भय यह सुच्छ मानवी संपद क्या-तृष्णाकी वृत्ति करे ।
 क्या हाथीके सुधित उदरको, जीरेका कण सुद्र भरे ॥
 बहो आसुरी विकट विपासा क्षीर जलधिसे जो न मिटे ।
 सुद्रताछसे क्या है आशा उस तृष्णाकी व्याधि फटे ।
 ज्यों ज्यों मिळते शामक साधन त्यों त्यों होती यह उद्दीप्त ।
 मैंने तो देखा है ईषन-से उवाचाको सदा प्रदीप्त ॥ ६-७ ॥
 जो विशिष्ट पुण्यात्मा कह्यते हैं देव स्वर्गवासी ।
 किंतु सुना है यह तृष्णा उनके भी गर्दनकी फासी ।
 पुण्यहीन जो इतर जीव हैं उनकी क्या कहे अब कौन ।
 उनकी विकट व्यथा लिखनेको है यह सुद्र लेखनी मौन ।
 जिस प्रलयंकर पवनपुंजसे, अचल शिलोच्चय डोल उठे ।
 शिवा शिरा, क्या प्राहि प्राहिकर वृक्षोंकी नहीं बोल उठे ! ॥
 तीन लोकको भस्म करे जो कुपित प्रलय पावक अतिघोर ।
 वहां बनेगे क्या तृण जीवित लाख लाख करके भी शोर ॥ ८-९ ॥
 इस नर-जीवनमें पदपदपर आसी हैं आपत्ति अनेक ।
 मरा हुवा है रोग राशिते तनका रोम रोम परयेक ।
 इस तरुणार्थकी सादरता भरे हृदयतासे आक्रान्त ।
 और काठके मुखमें रहता नरका आयुष्कर्म निरांत ।
 फिर भी खेद वही है प्राणी सदा चाइता नश्वर मोग ।
 इन हीमें सुख मान रहा है, है कीलित इसका उपयोग ।
 हा, संताप शांत करनेको करता है यह अमि प्रवेश ।

हालाहल भक्षण करता है, प्राणराम हित यह मूर्खेश ॥१०-११॥

अज्ञा, इन्द्रियोंकी अभिलाषा—शांति हेतु यह मूर्ख मदान ।

भोग और उपभोग वस्तुयें जुटा रहा देखो अज्ञान ।

१, हो, अग्नि बुझानेवालों, सोचो मनमें करो विचार ।

घृत छिड़केसे अग्नि बुझगी या होगी उद्दीप्त अगार ।

इस कुटुंबको सुखी बनानेका मनमें जो है संकल्प ।

इसी हेतु करते हों संचित भोग वस्तुयें अरे अनर ।

अज्ञे, उस्ताद कल्पतरु तुमने बोया है धर्मों किराक ।

सुख भी शांति कुटुंब तुम्हारा प्राप्त करेगा अब क्या साक ॥

अरे, देहकी रक्षामें रत विषयभोगक अभिलाषी

द्रव्य उपार्जनके प्रतपारी कीर्ति विषयके आकांक्षी ।

धर्माचरण छोड़ सब बैठे जप तप मनसे दिये निकाल ।

इत चित हो दीह रहे हैं विषयोके वनमें बेडाक ॥ १४ ॥

विषयी पूजा दान छोड़के स्वर्गमोक्षसे होते दूर ।

इह लौकिक सुख भोग कीर्तिको भी ये करते चकनाचूर ।

सतो भ्रष्ट हो इसो भ्रष्ट भी होते ये विषयोके मित्र ।

सत्य कहा है विषयाभोकी होती है गति महा विचित्र ॥ १५ ॥

सलिल बिदुसे जलधि न धाये अग्नि काष्ठ से हो नदि शांत ।

मृथु मरण से तृप्त न होती और तैल से दीप नितांत ।

धनसे कृपण न कमी अघात पर ये सब भी हो जाते ।

पर यह संभव कभी नहीं जो विषयी विषय मुझपावे ॥ १६ ॥

जीवजातिके सौख्य शांतिहित, तृष्णाका यह रूप विचित्र ।
 ' भवपद है संसार प्रवर्षक ' ऐसा कहते गुरु जगन्नित्र ।
 कुंथुसिंधु आचार्य शिरोमणि जिसने पाया आत्मानंद ।
 करते हैं उपदेश हितकर, 'सजो मध्य तृष्णाका फंद' ॥ १७ ॥
 प्र.:—सुनकर शिष्य खडा हुवा हो मन स्थिर भलीव ।
 कहिये गुरु किसवस्तुसे होय तृप्त यह जीव ?
 उ.:—अहो भव्य यह वस्तु विश्वमें ज्ञानामृत है परमपवित्र ।
 जो सायार्थ तृप्तिदाता है जो जीवोंका सच्चा मित्र ।
 जन्ममृत्युका नाशक है वह महा मधुर मंगलमय मिष्ट ।
 उसका निश्च दिन पान करो जो चाहो निजकल्याण विशिष्ट ॥
 प्र.:—गुरु सम्मुख तब शिष्य उठ खडा हुवा स्वयमेव ।
 ज्ञानहीन जन विश्वमें शोभे या नहि देव ? ।
 उ.:—बिनय बिन मस्तक नहि शोभे, निज दर्शन बिन ये युग नैन ।
 प्राण न शोभे पर सौरभ रत मधुर तथापि सख बिन बैन ॥
 ईश मार्धनाहीन वदन ज्यो शास्त्रश्रवण बिन-रुचै न कान ।
 आत्मगीत बिन कंठ न सोहे हस्त अशुभ बिनसेवा-दान ॥ २० ॥
 तीर्याटन बिन पाद न सोहे उदर अनर्गल भक्षणसे ।
 निज रस स्वाद विहीन रसज्ञा देश शून्य ज्यो शिक्षणसे ॥ २१ ॥
 नीतिविहीन शौर्य नहि शोभे धर्महीन ज्यो जगनेता ।
 मिथ्यापक्ष लिये, न चतुर भी वक्ता ज्यो शोभा देता ।
 बहु अधिकारी होकर भी जो स्वार्थसिद्धि करते केवल ।
 अथवा पापकार्य रत रहते तो शोभा हो किसके पक ? ॥ २२ ॥

द्रव्यहीनका भोग न शोभे दरिद्रकी भांशा फलहीन ।
 दुष्ट पुष्टकी बात अवज्ञायोग्य बताते पुष्ट मवीण ।
 उसका मानव जन्म क्या है जिसने स्वागा नहीं मनाइ ।
 उस राजाकी क्या शोभा जिसका सम हो नहि दृष्टि मसाइ ॥ २३ ॥

उसी भांति विज्ञानहीनके शरीर वाणो शोभाहीन ।
 जिन माहित सुखशायक मत उपवास आदि भी उसके दीन ।
 सम्यक ज्ञान विना खर तप, कल्याण मार्गमें हैं असमर्थ ।
 नेत्रहीन मानवकी जैसे सब श्रृंगार—रूपना व्यर्थ ॥ २४ ॥

प्रश्न:—बोला शिष्य विनीत अति तब कहिये मुनिभूष ।
 वाञ्छितशायक मुक्तिपद—सम्यकज्ञान स्वरूप ॥

उत्तर:—म्यब उत्साह भ्रौंमसंयुत है जो जिनकपित अनेक परार्थ ।
 सप्त तस पंचास्तिकाय बहुद्रव्य आदि जो वस्तु यथार्थ ।
 संशय विमोह विभ्रमवर्जित उन्हें जानना निश्चयरूप ।
 क्रिया सकलता हेतु, मोक्षपद है यह सम्यग्ज्ञानस्वरूप ।
 स्वयं प्रकाशी दीप विधमें प्रकाश भरता है जैसे ।
 सम्यग्ज्ञान आत्मपर सबका वेदन करण है जैसे ॥ २५-२६ ॥

जो ज्ञानसे ही तो रक्षित आत्माके दर्शन आरिज ।
 आता है अनुभवमें इस ही से तो आत्मार्नव पवित्र ।
 ज्ञानविना असमर्थ जीव यह कैसे उठरे मवसागर ।
 किसके भवसे रुके रहेंगे, कर्म कषाय कुटिकतस्कर ।
 कौन ज्ञानविष साधन क्या है, आत्मशुद्धिका संसृतिमें ।

देव बनेगा कौन सिद्धिदित निज समृद्धि की सुरमृतिमें ।
 आत्म देह की सहज भिन्नता ज्ञानबिना पदचाने कौन ?
 निज साम्राज्य प्राप्ति का जगमें यथार्थ साधन-ज्ञाने कौन २७-२८
 क्रोधमान माया सृष्टाका कदो कौन परिहार करे ?
 ज्ञान बिना इस मोहशत्रुका कौन सबल संहार करे ?
 शांति सौख्यके सुन्दर साधन ज्ञानबिना बतलावे कौन ?
 मैत्री और प्रमोद चित्तमें लावे कौन बढावे कौन ?
 चित्तरूप यह चंचल पक्षी किसके वशमें हो बिजज्ञान ?
 स्वामिसौख्यका औ स्वधर्मका कैसे होवे निश्चय मान ?
 इसीलिये हे मध्य सदा तुम प्राप्त करो यह सम्यक्ज्ञान ।
 इसके मिलजाने पर समझो वास्तव्योगमा मुक्तिस्थान २९-३०
 यही ज्ञान है जो करता है निज औ पर-दुःखका परिहार ।
 यही ज्ञान है जिससे होता कर्मबंध सब जलकर क्षार ।
 यही विद्वकी मधुर-सुभाहै अजर अमर अक्षय पदमूल ।
 यह स्वर्गीय सुरमि संयुत, कर्मनीय कीर्तिका सुन्दरशुभा ।
 इसी ज्ञानसे भवमयहरिणी वयावृद्धि होती उद्भूत ।
 इस ही के बल विद्व-प्रवादित करुणा कृपापमंजन पूत ।
 जैनधर्मका मूलमर्म-यह जगमें जानो सम्यक्ज्ञान ।
 इसकी प्राप्ति मध्य नित चाहो धरो हृदय इसहीका ध्यान ३१-३२
 जो दुःखदायक मान मंगल करता विद्वशांति सुखमंग ।
 यही ज्ञान है जो करता है उस मर्तगको तक्षण संग ।

सुदृष्ट मार्गमें गमन कराता सृष्टि : करता निज रत्नमें ।
 आत्म देशमें यह पहुंचाता करता अग : अपने वशमें ।
 सौख्यस्वरूपी रत्नत्रयमें कराता यह आत्मनिवास ।
 यही ज्ञान है कर्मोंका जो करता शीघ्र समूल विनाश ।
 साथ यही है सुन्दर भी यह यही समझो है शिवरूप ।
 इसकी प्राप्ति करो निवृत्तानी हो आओ इसमें तदूप ३३-३४
 पोर उपस्था करो सदा तुम चाहे तनको दो संकेश ।
 ज्ञान विना इस कर्म कालियाका न हटेगा तुमसे लेह ।
 पोर विद्विन्में जैसे कोई शक्तिसहित भी जन्म विहीन ।
 मार्ग न पाकर मटका करता करके अपने सुलको दीन ।
 इच्छा रहित महाभुक्ति शान्ति अथ उपस्था छे भी किन्तु ।
 आत्मशक्ति उद्घाटित करके काटे निवृत्त कर्मके तंतु ।
 किस प्रकार वे घाति विघाती केवलज्ञानी श्री अरहंत ।
 लुधा विनासादिक दोषोंका करते ज्ञान शस्त्रसे भंग ॥ ३५-३६ ॥
 किये जाय उस ज्ञानद्रव्यसे धर्मकार्य निज पर उपकार ।
 अथवा आत्मसाधना करके करे अविद्याका परिहार ।
 ज्ञान द्रव्य भी अंत विविध है बढता है न्यय करनेसे ।
 और नष्ट होता है यह न्ययहीन बुद्धिमें भरनेसे ।
 पोर इसे न चुरा सकते हैं, मूप इसे नहिं सकते छीन ।
 न्यु मित्र परिवारी भी हैं इसे बंटानेमें शक्ति दीन ।

ऐसा अनुपम ज्ञान प्रकट है इसको प्राप्त करो हे धीर ।
 सभी चतुर विद्वान बनोगे हीर हीर गंभीर ॥ ३७-३८ ॥
 ज्ञान तुरन्त गुणकारी सुखपद दुःखहर और पवित्र महान ।
 संसृति हारी निज सुखकारी, निजबोधक नाशक अज्ञान ।
 सुख सौभाग्य विवर्धनकारी उपकारी औ आनंद स्वरूप ।
 हस्तमहाशी भ्रमरतपनाशी अगमै है न पदार्थ अनुप ॥ ३९-४० ॥
 मूर्ख गृपति निजदेशपूज्य है, और कुपुत्र अपने घरमें ।
 मूर्ख धनिकनी कहां पतिष्ठा ! होवे तो मी-निजपुरमें ।
 अरुप देशमें वैद्य पतिष्ठित, मंत्र मंत्र मी मोड़ी दूर ।
 सैन्य सचिव कुछ लोकपतिष्ठित यी ही शक्ति मक्ति परपूर ।
 पूजे जाते अपने स्वलपर बड़े बड़े पर्वत औ गेह ।
 त्योही दानी मानी और विपरीत वेश भारीकी वेद ।
 किंतु ज्ञान है यह अपूर्व धन जिसका पूजक है सब देश ।
 सब नरनारी उसे पूजते उसे पूजते सर्व नरेश ॥ ४१-४२ ॥
 विषम दुःख देनेवाली जो आत्मा प्रभावकारिणी बुद्धि ।
 माया मत्सरतादि दोष जो हरसे हैं आत्मीक विशुद्धि ।
 वही ज्ञान है जो करता है इन दोषोंका पूर्ण महार ।
 जैसे पावक तृणसमूहको शीघ्र जलाकर करता हार ।
 गाढ अशुभा अंधकारका नाशक है यह सम्यक्ज्ञान ।
 आत्मद्रव्यका विशद तथा प्रतिभासक है यह सम्यक्ज्ञान ।
 राग द्वेष औ विषयेच्छाओंका अंतक यह सम्यक्ज्ञान ।
 आत्मदेसका दिव्य सूर्य है सुखदायक यह सम्यक्ज्ञान ॥ ४३-४४ ॥

पथभ्रष्टोंको मोक्षस्वपथ दिखलाता है यह सम्यक्ज्ञान ।
 भांति नष्टकर आत्मतत्त्व बतलाता है यह सम्यक्ज्ञान ।
 करता है चारित्रशुद्धि परिणामशुद्धि यह सम्यक्ज्ञान ।
 स्वर्ग मोक्षदायक, करता परलोकसिद्धि यह सम्यक्ज्ञान ।
 मनके सारे भैरु हटाकर अति पवित्रता देता ज्ञान ।
 आत्मधर्मकी श्रद्धाके मन्त्रदोष समी हरलेता ज्ञान ।
 स्वपरशुद्धिप्रद अति उदार भावोंको मनमें लाता ज्ञान ।
 आत्मसूर्य यह मोक्षमार्गका सच्चा शुद्धि विधाता ज्ञान ॥ ४५ ॥
 आदि नहीं है अन्त नहीं है निसका कभी विनाश नहीं ।
 विघ्न नहीं बाधा नहीं जिसमें श्रम भी खेदपशश नहीं ।
 शास्त्रन सीख्यरूप जो अद्भुत जो केवल चैतन्य महान ।
 ऐसे अनुपम मोक्षसीढ़ीको ज्ञान बिना की करे मदान ॥ ४७ ॥
 दानधर्मका मार्ग चला कर मगटे अशिशुस्य सुकीर्ति ।
 जो अन्याय नाश करनेवाली बतलावे वर नृपनीति ।
 मोक्षप्रदायक धर्म अर्थ श्री काम रूप जो वर पुरुषार्थ ।
 इनकी प्राप्ति करानेवाला ज्ञान बिना है कौन पदार्थ ॥ ४८ ॥
 होता है विस्तृत वसुधापर दीर्घविचारी जो विद्वान् ।
 नरनरेन्द्र श्री सुरसुरेन्द्र होते हैं वश उसके हित हान ।
 क्या बाधा है बोलो उसके सफल मनोहर हिते ।
 कर देता पत्थरको परिणत यह पुरुषार्थी सीधे ।
 तीजातृष्णा विषमापीडा कौन उसे दुःख है चित्त ।
 मूर पिशाच दुष्ट अद भी क्या उसके सुख है चित्त ।

कौन करे व्याख्यान ज्ञानकी अनुपम गौरव गरिमाका ।
 अन्त मिला है किसको इसकी दिगंतव्यापी महिमाका ॥४९-५०॥
 चित्तवृत्तिको रोक ज्ञानकी कुतिसत चेष्टा दूर करे ।
 ऐहिक बांछाका विनाशकर जगमें दिव्य प्रकाश भरे ।
 सुख संपद संपादन करता विषद व्यथाका नाश करे ।
 द्वेष दुष्टको दूर हटाकर समताभाव प्रकाश करे ।
 पाप नाशकर पुण्य बढ़ावे शुभा नींदके दोष हर ।
 यही ज्ञान है शिवप्रद, यो श्रीकृष्णसिंधु व्याख्यान करे ॥५१-५२॥
 ज्ञान विश्वमें इस मानवका कहलाता है नेत्र यथार्थ ।
 यही विशद है यह पवित्र है बाधारहित अनूह्य पदार्थ ।
 गुणपर्याय सहित द्रव्योका सत्य विवेचन करता है ।
 स्थूल सूक्ष्म पर्यायोका भी पूर्ण प्रकाशन करता है ।
 तीन भुवनका भास्कर है यह धर्मप्रकाशक सम्यक्ज्ञान ।
 सर्वसिद्धिका दाता यह आनंदप्रदायक वस्तु महान ॥ ५३-५४ ॥
 ज्ञानहीन जन अस्त्रिल वस्तुका करता है अनियम अपहार ।
 पशु समान आचरण करे दुष्कृतिरस उसका चित्त विकार ।
 विवेकवंचित सदा मूर्ख बड़ करता रहता व्यर्थ प्रलाप ।
 ज्ञान हीन नर जीवन पाकर करो न पर आमोद प्रमोद ।
 धर्मशून्य व्यवहारशून्य बड़ करता संचित निशदिन पाप ।
 आत्मबुद्धिसे रहित मूर्ख बड़ करता निजका परका घात ।
 उसके निकट व्यर्थ करना आचार विचार त्रिययकी बात ।
 पशु तो पशु होकर ही पशु है पर वह पशु है मानवनाम ।
 (सीलिये पशु सभी पशु है ज्ञानहीन नर अपका धाम ॥५५-५६॥

विश्व वित्रयिनी मृत्यु हाकिमीकी ज्ञानी बन विविध करे ।
 वो आध्यात्म दक्ष होकर व्यवहार दक्ष हो विघ्न करे ।
 इसी ज्ञानसे कला मगट हो कुकलाओका हो संज्ञा ।
 कीर्ति प्रसारित हो त्रिभुवनमें औ कुकीर्तिघा हो इच्छित ।
 नर अमरेन्द्र करे ज्ञानीका पूजा स्मरण और संस्कार ।
 नर धरणेन्द्रनाथ हो ज्ञानी सुखद मुक्तिघा हो मरणादिक-
 ज्ञानविहीन तुच्छ नरके अवतप मत्र औ मोक्षक टण्डल ।
 ध्यान नीन औ दया क्षमादिक मन कया विचार विचार ।
 सुन्दर चालचलन मृदुवाणी ध्येयधारणा विचारकाल-
 चंद्रविहीन रात्रि सम सारे रूप कलादिह हैं कर्मकाल-
 मातिपदायक अहित मार्गसे हटवा नहि विद्वान्जन ।
 हित पथकी, इच्छित पदार्थकी होती उमछे कर्मकाल-
 दुस्वसायक संसारचक्रसे मुक्ति कमी नहि काल-
 निज प्रदेश आनन्द भवनमें अज्ञ कमी नहि काल-
 जावे तो भी ठहर न सकवा जैसे दीर्घमेत-
 अंधकारमें कमी न कोई जावे जाकर नहि काल-
 चंद्र सूर्य दीपक तारे भी वस्तुप्रकाशक काल-
 पर स्वक्षेत्रमें बाह्य अल्प ही वस्तु प्रकाशित हो काल-
 किंतु ज्ञान है जो कि जानता तीन होइ काल-
 अस्त्रिल द्रव्य अविकल पर्याये सुखशान्ति काल-
 इसीलिये मैं यही समझता ज्ञान सरस्वती काल-
 है इस जगमें प्रबल प्रकाशक सब इच्छित काल-

ज्ञान प्राप्त करके भी जो नहीं करते शिवदायक शुभकार्य ।
 मानवजन्म कृत्य नहीं करते शान्तिदायक जो कि अनार्य ।
 निज साम्राज्य मूल नहीं करते अहो मूर्ख जो तत्त्व विचार ।
 निजानन्दमय अप्रतका जो पान करें नहीं अहो गँवार ।
 कुलकी और जातिकी रक्षा करे नहीं जो पाकर ज्ञान ।
 स्वर्गमोक्षपथ विचलित है वो परम दुष्ट भी मूर्ख महान ६५-६६

कैसे पुण्य विना हो पूरी राजभ्रष्टाचि की अभिलाषा ।
 आस्य विना माषणकी बाँछा धर्म विना निषिकी आशा ।
 पांव बिना क्या गमन करे भी नेत्रबिना क्या देखे रूप ।
 कैसे पावे ज्ञानबिना नर सुखदायक शुचि मोक्ष अनूप ॥ ६७-६८ ॥

ज्ञानी श्रेष्ठ पुरुषकी जगमें जनरक्षक हो नीति महान ।
 सकल अर्थकी सिद्धि स्वपरकी शुद्धि करे वह भव अदसान ।
 ज्ञानहीन परतंत्र दुष्टकी नीति सदा अग दुखकी खान ।
 सकल अर्थ नाशक कलहप्रिय पाता पद पदपर अपमान ॥ ६९-७० ॥

अग्निवेश करो तो अच्छा पीलो चाहे विषका घूंट ।
 व्याघ्रसिंह स्वाजावे अच्छा भले मारदे गज या ऊंट ।
 मरना हो तो मरो खुशीसे भ्रमण करो या नरक निगोद ।
 इसीलिये है यही भावना मेरी निशदिन हे भगवान ।
 मेरा महाशत्रु भी कोई रहे न जगमें हा अज्ञान ॥ ७१-७२ ॥

ज्ञानहीन बनका जगतीमें समताशील धर्म उपदेश ।
 मन्त्र शौर्य ऐश्वर्य अनूपम कांति शान्ति श्री सुगुण विशेष ।

कलित क्रियायें ललित कलायें, मक्ति शक्ति जग वशकरणी ।
 अन्वयोग भी सकल विकल है बिना एक सद्ज्ञान मणि ७३-७४
 ज्ञानयुक्त इतम मानवको वैसा वांछित सीख्य यथेष्ट ।
 देता है सुज्ञान निरापद वैसा सीख्य न नर सुरश्रेष्ठ ।
 मातापिता बहिन या भार्या मित्रपुत्र या बंधुविशेष ।
 यंत्र मंत्र साधत वर्ग भी दे नहिं सकते यक्ष नरेश ॥ ७५-७६ ॥
 देव धर्म कुल गोत्र जाति इह लोक और पर लोक पुराण ।
 पाप पुण्य नर भेद जन्म यम नरक निर्गोत्र मोक्ष बंधान ।
 विधि निषेध गुरु क्रुगुरु न माने मूर्ख, जीवकी गति श्री स्थान
 इसीलिये है कहना पक्का पापमूर्ति जगमें अज्ञान ॥ ७७-७८ ॥
 जन्म मरणका बंधमूल है । जो जगमें मिट्यात्त्व महान् ।
 विषयोकी अमिलाषा आशा जगज्जाठ भ्रांतिकी स्थान ।
 पापपीज है जो उपजाता जीवोंको दुस्त व्यथा विषाद ।
 ज्ञानी उन्हें नष्ट करता है रवि ज्यो अंधकार उन्माद ॥
 इच्छारहित किन्तु इच्छित मद अपतन नियम धारणा ध्यान ।
 जितवर कथित मार्ग जो देता जगको सीख्य शांति कल्याण ।
 दया क्षमा और सावुशीलता, शिवमुखके जो कारण मूल ।
 उन्हें महण करनेमें ज्ञानी करता कभी न जगमें मूल ॥ ७९-८० ॥
 ज्ञानहीन निज दोषराशिको कभी जाननेमें न समर्थ ।
 बाह्य वस्तुको और जाननेका करता फिर क्यों श्रम व्यर्थ ।

परम ज्ञानसे अंध अंध है है न जगतेम अंधा अन्य ।

यह सची परमार्थदृष्टि है इसका है विश्वास अन्य ।

ज्ञानहीन ही अरे हीन है वही दीन है जगमें एक ।

निजानंद सुखमें निमग्न श्री कुंथुसिंधुका मही विवेक ॥ ८१-८२ ॥

गीता-छंद-इस ग्रंथकी जगमें पठन पाठन करें जो भव्यजन ।

उनका सदा कल्याण हो यों कुंथु कहते ज्ञानधन ।

अहंत सिद्ध सुसुरि सारे दे उन्हें मंगल सदा ।

आचार्य शांति सुधर्मसागर मोक्ष सुख दे शर्मदा ॥ ८३ ॥

दोहा-शांतिसिंधुके शिष्य श्री कुंथुसिंधुने ग्रंथ ।

लघुज्ञानामृतसार रच प्रगट किया शिवपंथ ॥ ८४ ॥

गुरुपद कमल पराग में अक्षय नाम कुमार ।

गुरु रचनापर पद्य रच हर्षित हृदय अपार ।

गुरुका ग्रंथ विशाल है, उसका अर्थ गंभीर ।

यथामति निज बुद्धिसे रचें पद्य गुरुतीर ॥

श्री आचार्य कुंथुसागर महाराज विरचित

लघुज्ञानामृत सारका पद्यानुवाद

समाप्त



श्री १०८ आचार्य श्री कुंभुसागरजी महाराज रचित

‘लघुबोधामृतसार’ का पद्यानुवाद ।

(दोहा)

नमो ज्ञानरवि सर्गप्रद,
मुक्तिरथा मरुतार ।
बोध हेतु निर्मित कृत,
लघुबोधामृतसार ॥ १ ॥

(उपजाति छंद)

‘आया कहाँसे, चटना कहाँको ।
क्या कर्म करना जगमें मुझे है ।
संसार ज्ञाना नर नित्य ऐसा ।
सचिपने निबद्धसे विचारे ॥२॥

(१) नरकमें कौन जाता है ?—

कुदेव सेवी शठ पूर्व शूर

कुटुंबद्रोही कुलजातिडोसी ।

क्रोधी, कुमांगी, गुरु-धर्म द्रोही,
निरा दूरे जो शठ दानिपोंकी ॥३॥

जो धानकोका दूषणकोका,
वने विरोधी गुम साधकोका ।

जो शीशये पाल कलापधारी,

हा, ईस । होता नरकाधिकारी ॥४॥

(२) तिवेच कौन होता है:—

आचारसे हीन विवेकशून्य ।

आलस्यवारी व प्रहासकारी,

विरुद्रगामी व अमत्यमन्त्री

बिहावशीमूल कुवन्तरी ।

मानी व जोभी, विषयी कृतघ्नी । स्वाध्यायप्रेमी तपका तपैया ।
 न धर्मधारी न उदारदानी, जो आत्मशोधी स्वपरोपकारी,
 ऐसा अमागा नर पुण्यशून्य । वो मध्य ही तो शुभभावनासे
 तिर्यंच होता अगले भवोंमें ॥६॥ होता सुखी स्वर्ग-समृद्धि पाके ॥१०॥

(३) मनुष्य कौन होता है:— (५) मुक्ति कौन पाता है:—
 थोडा करे जोम प्रवृत्ति सीधी । महाव्रती जो त्रय गुप्तिधारी ।
 दयालु हो संसृतिसे डरे जो, हो सत्यचर्या जिसकी सदा ही ।
 विनम्र हो शांत समानदृष्टि संसारका अन्तक शुक्लध्यानी ।
 हो धर्मप्रेमी व कुधर्मदोही ॥ ७ ॥ स्वराग्यकामी निजधामगामी ॥११॥
 जो देव औ शास्त्र सुधर्मसेत्री । कर्मादिका शत्रु चिदात्मवेदी ।
 दानी करे जो गुरुपादमक्ति । जिसे सदा स्पष्ट निजआत्ममूर्ति ।
 पूजादि सोरसाइ करे सदा ही, वही प्रभू कर्मकलंकहारी ।
 उसे मिलेगा नरवन्म आगे ॥८॥ योगी वरे सुंदरि-मुक्तिनारी ॥१२॥

(४) स्वर्गमें कौन जाता है:— (दोहा)
 संसार, ये भोग, शरीर, सारे । कुंतुसागराचार्यकी ।
 जिसे न मोहें वह सद्गृहस्थी । कृतिका ले आधार ॥
 सम्यक्त्वधारी वह साधु होगा । भाषोंमें ये पद्य लिख ।
 संसारका पार जिसे दिखा हो ॥९॥ अक्षय मुदित अपार ॥

श्रीकुंतुसागर पच्चीसी

स्व. परमप्रभावक आचार्य कुंतुसागर महाराजकी स्मृतिमें

विरचित पच्चीस मजनोंका संग्रह

[रचयिताः—श्री त्यागी धर्मसागरजी]

[मजत नं. १]

॥ तर्ज-छोटो मोटो सुईयारे ॥

कुंतुसिंधु महाराज ! दुस्त्रियाके दुस्त्रको टालना ॥ टेक ॥

आप तिरे हो गुरू भीरोको तारना, हा २, येहि अरज हीवे धार

दुस्त्रियो निकट बुलावना ॥ कुंतुः ॥ १ ॥ अष्ट करम गुरू अति

दुस्त्र देवे, हा २, यो दुस्त्र सयो नहीं जाय, कर्मसे हुदावन्ध

॥ कुंतु ॥ २ ॥ समता सरोवर करुणाके सागर, हां २, गुरुवर दीन

दयाल, भेन करसावना ॥ कुंतु ॥ ३ ॥ अमृत प्याला गुरु-

वर पीलावे हां २, येहि ईच्छा दिल माहीं, अरजी सो दिये

धारना ॥ कुंतु ॥ ४ ॥ पटकापाके हो प्रतिपालक, हां २,

जल्दीसे कर गुरु पार, धरमको निभावना ॥ कुंतुः ॥ ५ ॥

[मजत नं. २]

॥ तर्ज-मायला मान मान मेरी मान ॥

ऋषीवर कुंतु सिंधु पधारे हमारो मग्गय उदय हुवो आज

॥ टेक ॥ कुंतु गुरू आपे नवनिधि लाये, छटो मविजन आज

हमारो भाग्य उदय हुवो आज ॥ १ ॥ ऋषोवर आपे सब मन

भाये, अमृत पषे आज हमारो भाग्य उदय हुवो आज ॥ २ ॥

पर उपकारी गुरु हितकारी, काटो करम ऋषि आज हमारे भाग्य उदय हुओ आज ॥ ३ ॥ पूरण भाग्य उदय भारतको, आवे गुरुवर आज हमारे भाग्य उदय हुओ आज ॥ ४ ॥ संवसदित गुरु देव ही विसरे धर्म दीड आवे आज हमारे भाग्य उदय हुओ आज ॥ ५ ॥

[भजन नं. ३]

॥ तर्ज-स्वारंथका संसार पंधु मेरे ॥

कुन्धु सिन्धु महाराज तारनवाले, कर भवदधिसे पार गुरुदेव हमारे ॥ आप तरे औरन को तरे, गुरुवर दीपदमाल तारनवाले ॥ १ ॥ सब जीवोंके गुरु हितकारी, भव्यजीवोंके प्रतिपाल, तारनवाले ॥ २ ॥ जैन अजैन सब दीडकर आवे, सबको करो निशाल हो तारनवाले ॥ ३ ॥ सबजीवोंको गुरु समझावे, छोटी सभी जंवाल तारनवाले ॥ ४ ॥ त्यागी धर्म सब ऋषि मुनियोंको, नित्य नमावे माल ॥ ५ ॥

[भजन नं. ४]

॥ तर्ज-थोडांसी जिंदगीमें क्यों किसीसे, फडवा बोले ॥

गुरुवर कुंधुदयाल, विश्वके हो हितकारी ॥ आप तरे हो गुरुदेव, हमको तारनवाले ॥ दूबे हैं भवदधि माहि जल्दी करो किनारे ॥ १ ॥ कुन्धुसिन्धु ॥ लगती जनताकी भीड सुनकर अमृतवाणी भव्योंका करो उद्धार, यही है आज हमारी ॥ २ ॥ गुरु ॥ षट्कायाके जीव, तिनके हो प्रति पालक ॥ इन्द्रियोंको कीना आधीन, सुमति हे गुरु प्यारी ॥ ३ ॥ पंच महाभत धार, पांचों

अमिठी समांठी ॥ तीन गुपति उरधार, कीर्ती मोक्षकी तयारी ॥५॥
 त्यागी धरम गुरु ठार, करता जय अयकारी करो, भवदधिसे पार,
 यही विनवी हमारी ॥ ५ ॥

[भजन नं. ५]

॥ तर्ज-पारसोला घारी गती सुधर गर्दरे ॥

गुरु कुन्थु हमारे, चारों वरण को तारे ॥ टेर ॥
 वाक्षण कहे गुरुदेव हमारे, क्षत्री कहे मुज प्यारे । वैश्य-
 दौड चरणोमें आये, शूद्रोका कीना सुधार ॥ १ ॥
 कन्याविक्रम अरु मरण भोजने, भारतको समी उजाडे ॥
 श्रीगुरु उपदेशामृतसे, कुसिती किया किनारे ॥ २ ॥
 दक्षिण ठार उत्तरको तारी, गुजरात सभी सुधारे ॥
 वाग्बर समी सुधारके, आये मेवाड किनारे ॥
 सेली तंबोळी गाची मोची, समी करे पुकारे ॥
 सुनार सुतार लवार पटेल कहे, अमो गुरुदेव ॥
 क्रोध तजो मायाको छोडो, लोभको दो पटकारे ॥
 त्यागी धरम यही समझाये, हो भवदधिसे पारे ॥
 ॥ गुरुदेव हमारे ॥ कुंथु हमारे ॥

[भजन नं. ६]

गुल्बर ज्ञान सिखाओ, हमारे घर आवोना ॥
 तम अज्ञान मिटाओ, सुमति प्रकटाओना ॥
 स्वामी अविनाका, छाया अन्धेर है ॥ १ ॥

कर्मोंका चक्रा है, किस्मतका फेर है ।
 शंशटमे आके ये, संख्या सवेर है ॥
 क्या जाने कितनी सुधरनेमें देर है ॥ ४ ॥
 स्वामी ब्रह्मा दिखलाओं ना ॥
 पतिष्ठोंको स्वामी, तुमहीनें उठाये हैं ।
 मूले हुओंको, सुधमे भी लाये हैं ।
 सोते हुओंको दयाकर जगाये हैं ॥ ४ ॥
 दुष्कर्म दुष्टोंको, जगसे मगामे हैं ।
 स्वामी हमें भी बगाओंना ॥ ३ ॥ गुरुवर ॥
 हमको कषायोंमें हे नाथ पकडा ॥
 विद्वेष संवलेश भावोंने जकडा ॥
 वे धर्म जीवन हमारा हैं बिगडा ॥
 किससे कहें नाथ अपना ये दुखडा ।
 धर्म कहे दुखोंसे छुडामोना ॥ ४ ॥ गुरुवर ॥

[भजन नं. ७]

॥ तर्जः—मायरी मेरी मन तेरी लाल हरे ॥
 गुरु कुन्थु हमारी, अरजीये ध्यान धरो ॥
 क्रोधमान मद लोभ फिरते हैं, इनको दूर करो ॥ टेर ॥
 काल अनन्तसे भ्रमण करतमें । धायो न धरम खरो ॥२॥
 सत्य पंथ मुझे सुझे, नाही गुरु अन्तर दीपदरो ॥
 बढता हृदय, सदबुद्धि ना आवे ॥
 सौम्य प्रकृति करो ॥ गुरु ॥
 त्यागी धरम कर जोडी बिनवे ॥ मन उर आनन्द भरो ॥३॥

[मञ्जन नं. ८]

॥ तर्ज-मोक्ष जानेका मेरा इरादा हुआ ॥

मेरे भगवान् मेरी यही आशा है ॥ पूर्ण कर दोगे इच्छा
 ये विश्वास है ॥ १ ॥ मेरे मनमें सदा, आपका ध्यान हो ॥
 अपनी जातीका, कुलका सदा भान हो ॥ २ ॥ धर्मसेवामें अर्पण,
 सदा प्राण हो ॥ मेरे मनमें सदा देशका ध्यान हो ॥ मेरे भगवाण् ॥ ३ ॥
 पांव तन्मार्गमें मैं, कभी ना धरू ॥ न्यायनीतिसे जीवन ये बुरा
 करू ॥ जातिसेवामें स्वामी, खुशीसे भरू ॥ मेरा मन आपके चरणोंमें
 सदा धरू ॥ मैं तो बलहीन हूँ नाथ बल दीजिये । मेरी इच्छाये
 स्वामी, सफलता कीजिये । मेरी सारी समस्याये हल कीजिये ।
 आपके चरणोंमें वास दीजिये ॥ मेरे भगवान् ॥

[मञ्जन नं. ९]

॥ तर्ज-तुलसी मगन भवे प्रभू गुण गायके ॥

कुन्धुसिन्धु पुरु देवा, सत्यको बतायके ।

महाको मिटायके, सत्यको बतायके ॥ टेर ॥

क्रोध मान माया, नरकोंका मारग ।

क्षमा सत्य समवासे, इनको हटायके ॥ टेर ॥

हिंसा छूट घोरी, सत्य गुण नाश करे ।

अहिंसा सत्य, अचीरि अशान्तिसे मिटायके ॥ २ ॥

जूआ बोरी और बेइया, धर्मको नाश करे ।
 गुरुदेव कहे प्यारे इनको भगायके ॥ ३ ॥
 क्षमागुण आर्जव मार्दव चित धरो ।
 साथ शील संतोष, मोक्ष मिलायके ॥ ४ ॥
 देव गुरु शास्त्र तीन पद अटल रहो ।
 धर्म कहे मन्वज्जीव, प्रमाद नशायके ॥ ५ ॥

[भजन नं. १०]

॥ तर्ज-मेरे शंभु कैलास बतयाया करो ॥
 गुरु कुन्धु कहे दान देते रहो ।

स्वर्चा धनका धरममे किया तो करो ॥ टेर ॥
 आहार अरु औपधिके दानसे, ज्ञान भन बृद्धी करो ।

त्याग जप तप पुष्ट करता, करममल दूरी करो ।
 प्यारे प्रेमसे दान दिया तो करो ॥ १ ॥

देवदान नवदानसे, सेवा करे कर जोडके ।
 भोगभूमिमें जन्म भेरा, अंतरायको तोडके ।

ऐसां लाभ अमोल मिलाया करो ॥ २ ॥
 दारिद्र्य सब ही भागता, अपकीर्ति नहिं होता कभी ।

रोगादि संकट क्लेश भी निव, दूर ही रहता सभी ।
 सचे पात्रोके धरण दूर्यां तो करो ॥ ३ ॥

त्यागी धरम कर जोड कहता यह ऋद्धि सिद्धि अमोल है ।
 ऋद्धि सिद्धि इन्दीके आभित जन्म यह बहुमोल है ।

तीन पात्रोको दान दिया तो करो ॥ ४ ॥ गुरु कुन्धु ॥

[मञ्जन नं. ११ तर्ज-मञ्जन]

सरस्वतीना ब्याला, हमने मूल लागी छे ।
 साधव्याना प्यारा हमने मूल लागी छे ॥ टेरे ॥
 इन हुंदावसारणीमध्ये, गुरु पदाप्रकरो पारा ।
 दया करी सब जीवोंपर, हमने मूल लागी छे ॥
 गुरु भेदाभेद बताया, अरु तत्त्वज्ञान दरसाया ।
 फिर मोक्षमार्ग बटलाया, हमने मूल लागी छे ॥
 गुरु सोठी भारतको जगाई, अरु मिथ्या मोह नसाई
 नेकीका रास्ता बताया, हमने मूल लागी छे ॥
 अरु धर्मसागर झट आया, चरणोंमें वो छिपटाया ।
 फिर हरष २ गुण गाव, हमने मूल लागी छे ॥
 सरस्वतीना ब्याला, हमने मूल लागी छे ॥

[मञ्जन नं १२]

॥ तर्ज-मोक्ष जानेका तुमने इरादा किया ॥
 जैन साधूके उपकार, चमत्कार है ।
 इस चमत्कारको ही नमस्कार है ॥
 पोर गरमी पढे चाहे, बरसात हो ।
 शीत मारी पढे चाहे हीम पान हो ।
 ये तो फिरते सदा ही, यथाप्रत हो ॥
 मानो इनका मरुत्तिये अधिकार है ।

पात्र वैदल घले किन्तु थकते नहीं ॥
 मुँह कमी दूसरेका वे सकते नहीं ।
 विज्ञ बाधा इन्हें रोक सकते नहीं ॥
 आत्म शक्तिका, हमके नहीं पार है ॥
 विश्वकी संपदा इनके आगे पड़ी ॥
 इन्द्रकी अप्सरा ये सेवामें खड़ी ।
 इनके दिलकी दिवालें बड़ी हैं कड़ी ॥
 रहते निर्मोह निश्चल वा अविकार है ।
 सारी दुमियाके जीवोंके ये मित्र है ॥
 देते शिष्याये सबको ही सु-पवित्र है ।
 इनका उद्धृत निराळा ही चरित्र है ॥
 इनका जीवन समीका सलाहकार है ।
 खाने पीनेकी हमको न परवाह है ॥
 न परल्लोकी महल्लोकी भी चाह है ।
 आत्मकल्याणका मनमें उत्साह है ॥
 धन्य संसारमें इनका अवतार है ।
 देखों कैसेको कैसे ये उत्पाटते ॥
 खेतसे घासको जैसे हो काटते ।
 कुछ भी चेहरेये दुस्तको न उद्घाटते ॥
 धर्म कहे जिना है इनका सुराकार है ।

[भजन नं. १३]

॥ तर्ज-मेरे शम्भु फैलास बुलालो मुसे ॥

गुरू कुन्यु सिनु चिरंजीवी रहो ।

चिरंजीवी रहो आरोग्य रहो ॥

धन्य है देश कर्नाटक तुम्हारी ।

नगर एमापुर चिरंजीवी रहो ॥ १ ॥

धन्य है श्रावक सातप्पा बुळ तेरो ।

सरस्वती माता चिरंजीवी रहो ॥ २ ॥

विश्व उद्धार किया कुंयु गुरूवर ।

धर्म दिगम्बर चिरंजीवी रहो ॥ ३ ॥

रघाये प्रन्य नये नये गुरूवर ॥

ज्ञान तुम्हारा चिरंजीवी रहो ॥ ४ ॥

स्यागी धरम ये निठ चाहे ॥

स्वस्थ रहो आयु तुम्हारी चिरंजीवी रहो ॥ ५ ॥

[भजन नं. १४]

॥ तर्ज-वारों वरणको तरे ॥

पारसोला तेरी गती सुभर गहरे ॥ टेर ॥

गुरू पभारे सबको माये समीका किया सुभारा ।

कन्या विक्रमे अरु बरण भोजका, गुरूने मूळ उखाडा ॥ २ ॥

आचार विचारसे हीन मये है, जिसको गुरू सुभारा ।

उपदेशामृत पांयकेरे, मनका मेल निकारा ॥ २ ॥ पारसोला ॥

सम्यक्त पकड मिथ्यात्व छोडदो, ये ही शिक्षा हम
 क्रोध तजो मायाको छोडदो हो जावो भवपारा ॥ १ ॥
 त्यागी धर्म सबको समजावे, नेमको करदो गाढा ।
 इन नेमोंको जो तोडोगा, नरको बीच पछाडा ॥ ४ ॥

[भजन नं. १९]

॥ तर्ज-माड छनगारीरा ढोला ॥

गुरु कुन्यु पधारे, हमको सुधारे, पारसोलापुरमे भाय ॥ टेर ॥
 कन्या विक्रये अरु मरण भोजने तुरत दीमा निकार ।
 उपदेशामृत पायकरे हमको कीना नेहालरे ॥ गुरुराज ॥ १ ॥
 संपसदित गुरुदेव पधारे, जय जय करे नर नार ।
 माय उदय अब हुआ हमारा, जल्दी करो भवपार रे ॥ गुरुराज ॥
 विश्वका उद्धार किया है, रचिया ग्रन्थ अपार ।
 शानामृत बोधामृते, शान्तिसिन्धु सुखकाररे ॥ गुरुराज ॥ ३ ॥
 नमिसागरजी, अजितसिन्धु हैं देवसेन गुरु लार ।
 वीर गुरु, अरु बाहुबलीजी, हमरा करो उद्धाररे ॥ गुरुराज ॥ ४ ॥
 त्यागी " धर्म " करे विनती छूल्क आदिके लार ।
 गुरु-चरणोमे काजोरे, मूलो नाही लगाररे ॥ गुरु ॥ ५ ॥

[भजन नं. १६]

॥ तर्ज-तरकारी लेलो मालन आई बिकानेरसे ॥
 कुन्युसागर स्वामी अरजी मेरो सुनलीजिये ।

मोह मदिराको मैंने पीदो, सुधबुध सब विसराई ।
 परवस्तुको आपनो जानके, नरक बिसे दुख पाये ॥ १ ॥

क्रोधघणो माया अतिमारी, लोभ बढो दुखदाई ।
 लुप्ता नागनी निठ २ बंके इनसे दो जूटाई ॥ २ ॥
 अज्ञान अंधेरा मरा ठर मेरे निज आत्म न दिखाई
 ज्ञानचिराग लगा गुरुदेवा तनको दोगा नसाई ॥ ३ ॥
 विश्व उद्धार किया गुरुवर, जैनका संदा फडराई ।
 मोक्षमार्ग बताय भक्तको दुर्गतिसे लीना बचाई ॥ ४ ॥
 त्यागी धर्म नित प्रति बन्दे, गुरुचरण चित्तलाई ।
 मेरी गती सुधार गुरु स्वामी कर्मको दोगा सुसाई ॥ ५ ॥

[भजन नं. १७]

॥ तर्ज-गुरुवर ज्ञान सिखाओ ना ॥

गुरुवर ध्यान लगाना, हमे सिखलाओ ना ॥ टेर ॥

संसार चक्रमे गुरुवर पढा हूँ ॥

इससे सुझाओ मे सन्मुख सदा हूँ ।

मातापिता रमा पुत्रोने पकडा ।

पीठे लगा दे कषाबोका लकडा ।

सुशिक्षा इससे सुनाबीना ॥ गुरुवर ॥ १ ॥

इन्द्रियोका-चक्र अरु मायाको जाड है ।

करने न देखे हूँ पुण्य अरु दान है ।

बसत बडा जाय पीठे बैरान है ।

यही गुरुमे हमारा सवाड है ।

कुन्पुगुरु इससे सुझाओना ॥ गुरु ॥ २ ॥

अज्ञान अंधेराको हमसे मगाईये ।

ज्ञानके मार्गपर हमको लगाईये ।

सुमति सखीसे हमको मिलाईये ।
 कुमतिसे दांभन हमारा छुड़ाईये ।
 मोहराजाको गुरुवर हटाओना ॥ ३ ॥ गुरु ॥
 त्यागी धरमकी यही अरज है
 फिकर लगी है हमे मक्की मरज है ।
 और किसीकी म हमको गरज है ।
 गुरुवरके चरणोंमें यही अरज है ।
 मोक्षपथ—पगदान सिखलाओना ॥ ४ ॥ गुरु ॥

[मजन नं. १८]

॥ तर्ज—दिलादे भीख दर्शमकी ॥

मजा जिनको फकीरीमे, अमीर्ग क्या विचारी है ॥ मजा ॥
 तजा घरशरफा नाता, लगा है प्रेम आतममे ।
 सजा है क्रोध अरु माया, फिरे वन वन बिहारी है ॥ मजा ॥

कमी वो घूपमें बैठे, कमी छायामें जा सेटे ।
 लगे बरसाद घुन मारी, छपी जङ्गलकी न्यारी हैं ॥ मजा ॥ २ ॥
 कमी लड्डू कमी पेढा कमी नीरस निराहार ॥
 पिछावे धर्मवारोको इन्हीकी रीत न्यारी है । मजा ॥ ३ ॥
 करे उपकार दुनियांका, स्वयंका कोई नहि स्वार्थ,
 दयाका है गुरु दरिया, सुमति हिरदे बिराजी हैं ॥ मजा ॥ ४ ॥
 कहे फिकर धरम सागर भी हमे भी कोई नहि इच्छा ॥
 रखो चरणोंमे स्वामीजी, यही अरजी हमारी हैं ॥ मजा ॥ ५ ॥

[मजन नं. १९]

॥ तर्ज-बिनां रघु नाथके देखे ॥

श्री गुरु कुन्धुवर स्वामी, किया उद्धार मध्योका ।
 फेसाया जैनका झंदा, बलाया ज्ञानका मोका ॥ श्री ॥
 खुलाई पाठशाळावी, मिटा अज्ञान दुनियांका ।
 हुई घुमी ज्ञानकी घर घर, किया उद्धार भारतका ॥ श्री ॥
 हुवे भव सिन्धुके माँही, किया उद्धार गुरुवरने ॥
 किनारे किस्ति वो मेरी लगाया शीघ्रही धक्का ॥ श्री ॥
 रचाये ग्रन्थ अतिमारी करी गुरु शिवकी तयारी ।
 पिलाई ज्ञानकी बारी, हुआ है ज्ञान आतमका ॥ श्री ३ ॥
 हुवे जो जैन जैनेतर, लुडाया मांस अरु मदिरा ।
 सुनाया जैन तर्जोको, किया गुरुराजने पक्का ॥ श्री ॥
 कहे त्यागी धरम भी यों, किया उद्धार ऋषिसिंवरने ।
 लगाया ज्ञान मार्गपर जमाया जैनका सिक्का ॥ श्री ॥

[मजन नं. २०]

॥ तर्ज-छनगालीरा ढोला ॥

गुरु कुंधु पधारे इनको उधारे चर्तुगती दुख मार ॥
 नर्क निगोदमे गुरुदेवा, पायो दुःख अपार ॥
 एक स्वासमें अठदस बेरा, जनमो मर्यो दुखपार ॥ १ ॥
 एक इंद्रिमें छेदन काटन, दो इंद्री दुख लार ।
 तेइंद्री घाप्योसे मारा, षऊ इंद्री दुखकार ॥ २ ॥

पंच इन्द्रिमें जन्म हमारो, मन विन दुःख अपार ।
 मनसचेत पंचइंद्रो मयो तो, ईष्ट अनिष्ट दुखवार ॥ ३ ॥
 पंच इंद्रिके दुखसे छुढायो, यही अर्जी हिये धार ॥
 आप बीना कौन तारे गुरूजी, त्यागी-धर्म भी लार ॥४॥

[मजन नं. २१]

॥ तर्ज-तुमको लाखो प्रणाम ॥

कुन्धु सिन्धु ऋषिराजा, तुमको लाखो प्रणाम ॥

एनापुर शुभ नगर तुम्हारा वैश्यवर्णमें हुवा अवतारा

साठप्याके लाला तुमको लाखो प्रणाम लाखो ॥ १ ॥ कुन्धु ॥

धन्य देवी सरस्वती गुरुमाता जीवनके कुखमें जन्मे मुरु दाता ॥

चारो वर्णको तारे तुमको लाखो प्रणाम ॥ २ ॥ कुन्धु ॥

उत्तर देश गुरुवरने तारे गुजरात प्रान्तका किया सुधारा ।

मेवाडमें पग धारे, तुमको लाखों प्रणाम ॥ ३ ॥ कुन्धु ॥

आत्मतत्व गुरुदेव बतावे, सब दुनियाँके मनमें आवे ।

कुरीसिक्क जडमूल उखारे लाखों प्रणाम ॥ ४ ॥

जैन अजैन गुरूके गुण गावे, दीड दीड चरणोंमें आवे ॥

त्यागी धर्म भी लार तुमको लाखो प्रणाम ॥५॥ कुंधु ॥

[मजन नं. २२]

॥ तर्ज-हम तो जिनवाणी सबकी सुनाते जायेंगे ॥

हम गुरुवरके केशलोच, देखनको आवे हैं ।

देखनको आवे हैं, सिरको झुकाये हैं ॥ हम ॥ टेर ॥

दिगंबर साधुका यही चमस्कार है ॥
 चमस्कार ही को सदा नमस्कार है ॥
 धन्य है गुरुवर तुमने शक्ति दिखाई है ॥
 किसान खेतसे गास उखार फेके ।
 इसी तरह गुरुवर बाँलोंको खेच नासे !
 हम तो चरणोंमें शिरको झुकाने जायेंगे ॥
 जैन अज्ञानकी मोह हुई है मारी ।
 जय जय करे है सभी नरनारी ।
 हम गुरुवरके गुणोंको गाते जायेंगे ॥
 पंचम कालमें गुरुवर उद्धार किया ।
 सोते हुवे को गुरुवर जगाय दिया ।
 त्यागी धरम भी धन्यवाद गाये जाये हैं ॥

[मञ्जन नं. २६]

गुरुवर मोक्षका मारग बताते जायेंगे ॥
 बताये जायेंगे, सुनाये जायेंगे ॥ गुरुवर ॥
 गुरुवरके उपदेशसे, पाँसलका नाश हो ।
 सच्चे तत्वोंका हृदयमें प्रवेश हो ।
 झूठे तत्वोंको गुरुवर सुडाते जायेंगे ॥१॥गुरु॥
 अज्ञानोंके हृदयमें धर्मका धाम करो ॥
 जैनोंके हृदयमें सम्यक् प्रकाश करो ।
 गुरुवर चारों वारणोंको सुनायेंगे ॥ गुरु ॥ २ ॥

कन्या विक्रयका दुख, गुरुवरने छुडादिया ।
 मरण भोजका मूल जहसे हटाय दिया ।
 मन्म जीवोके हृदय, जगाते जायेंगे ॥ गुरु ॥ ३ ॥
 ब्राह्मण क्षत्री अन्य ये पुकार करे ।
 धन्य है गुरुवर, हमरा उद्धार करे ।
 भवसिंधुसे हमको तिलाते जायेंगे ॥ गुरु ॥ ४ ॥
 धन्य है गुरुवर तुम्हारा ही मास पिता ।
 काम देव योधाको, कुंथु गुरूने जीता ।
 त्यागि धरमको शरणोमें लगाते जायेंगे ॥ ५ ॥ गुरु ॥

[मञ्जन नं. २४]

॥ तर्ज-ब्रजराज आज सांभरो वंशी धजाय गयो ॥
 शरन पहीकी लाज गुरु राख लीजिये ।
 करके दया दयाल, गुना माफ कीजिये ॥ टेर ॥
 निगोदके अंदरमें गुरु दुख सया गया ।
 उसकी पुकार कुंथु गुरु सुनलीजिये ॥ १ ॥
 निगोदसे निकलके मैं स्यावर तन धरा ।
 उस दुखकी अरज पर गुरु ध्यान दीजिये ॥ २ ॥
 वे इंदी तेई इन्द्रि चौईन्द्रि प्रस हुआ ।
 विकल्पके दुखसे छुडाय लीजिये ॥ ३ ॥
 पन्च इन्द्रि हुवा असैनी न नही मिला ।
 ज्ञान बिना दुखल गणो उससे मिलाय दीजिये ॥ ४ ॥
 इस दुखसे छुडाओ गुरु शरण आरिया ।
 ये धरमकी पुकारये गुरु लक्ष दीजिये ॥ ५ ॥

भजन नं. २५

॥ तर्ज लकड़ीका फारस ॥

आदिमें लकड़ी अन्तमें लकड़ी देख समाशा लकड़ीका ।
 रेट कुर्चा अर मेदी मठ मी डोटीके डंका लकड़ीका ॥ १ ॥
 साठ बरसकी ऊपरकी प्यारे पढनेकी ठेप्यारी की ।
 पांच पचीस मिठ पढने चाले हाथमे पाटी लकड़ीका ॥ १ ॥
 तीस बरसकी उपर प्यारे, शादीका विचार किया ॥
 पांच पचास बराती लेके शोरण बांधे लकड़ीका ॥ २ ॥
 पचास बरसकी ऊपरमें, हाथमे डंका लकड़ीका ।
 चाकुर लकड़ी बैठत लकड़ी देख समाशा लकड़ीका ॥ ३ ॥
 साठ बरसकी ऊपर प्यारे मरनेकी ठेप्यारी की ।
 पांच पंचीस कटुम्बी मिठके टकटी बांधे लकड़ीका ॥ ४ ॥
 आठ कटुम्बी रोने लागे, टकटी ठठाई पांचोमे ।
 जकडी लकड़ी पकडी लकड़ी आगे गाढा लकड़ीका ॥ ५ ॥
 ऊपर लकड़ी नीचे लकड़ी लंपा लगाया लकड़ीका ।
 भाव जले बीरनकु अझावे, देख समाशा लकड़ीका ॥ ६ ॥
 परको त्यागके मुनी भये हैं हाथ कर्मठ लकड़ीका ।
 पेशीमें लकड़ी निरप रहे सोनेका पाटा लकड़ीका ॥
 त्यागी घरम कहे लकड़ी प्यारी पकन सहारा लकड़ीका ।
 साँप सपेरे कुर्चा ताडे नंदीमें अगवा लकड़ीका ॥ आ. ॥

विश्वबंध आचार्यश्रीका अंतिम आदेश तथा उपदेश



“ ॐ विनाय नमः ।
सिद्धाय नमः । ॐ महसिद्धाय नमः
मासवेरावत-क्षेत्रस्य मून-भविष्य
वसंपान सोस चौबीसी भगवा
नमो नमः । सीमंधरादि की
विहरमान-सीयंकर भगवान न
नमः । ऋषमादि महावीर्य
चौदहसी बावन गणभरदेवेभ्य
नमो नमः । चौसठ ऋद्धिघां
मुनीश्वराय नमो नमः । अंतकृत

केवलीमुनीश्वराय नमो नमः । मत्येक सीयंकर के समय होने वारं
दश दश घोरोपसर्गविजयी मुनीश्वराय नमो नमः ।

गमाह अंग चौदह पूर्व छात्र महासमुद्र हे । उसका वर्णन
करने वाला आज कोई श्रुतकेवली नहीं है । कोई केवली भी नहीं
है । श्रुतकेवली उनका वर्णन कर सकता है । मुझसरीला मुद्र
मनुष्य क्या वर्णन कर सकता है ? वह अपने आत्मा का कल्याण
करने वाला है । विनायकी सरस्वती देवी अनन्त समुद्र प्रमाण है ।
फिर तबमें विनायकी जो जीव धारण करेगा उसका कल्याण
अवश्य होता है । अनन्तसुख को प्राप्त कर वह मोक्ष प्राप्ति कर

होता है। अनन्त आगमों में एक अक्षर—एक ओ अक्षर—मात्र को
 दो धारण करता है उस जीव का कल्याण होता है। सम्भेद-
 अक्षर में दो मन्त्र लड़ते थे। णमोकार मंत्र के पभाव से स्वर्ग गये।
 प्रेष्ठी सुदर्शनने बैल को उपदेश दिया वह स्वर्ग गया। सप्तव्य-
 सनधारी अंजन चोर णमोकार मंत्र के उपदेशसे स्वर्ग गया, मोक्ष
 गया। अरे यह तो छोड़ो। कुष्ण मश नीच जाति का, जीवधर-
 कुमार ने उपदेश दिया वह भी देवगति में गया, इतनी मदिमा
 त्रिनधर्मकी है परन्तु इसे कोई धारण नहीं करता है। जैनी होकर
 भी त्रिनधर्म विश्वास नहीं। अनन्तकाल से जीव पुद्गल दोनों
 भिन्न २ हैं, यह सब जगत् जानता है। परन्तु विश्वास करते
 नहीं। पुद्गल अलग है जीव अलग है। दोनों ही भिन्न २ होते
 हुए भी अपने जीव हैं या पुद्गल इसका विचार करना चाहिए।
 अरन तो जीव हैं, पुद्गल नहीं। पुद्गल अलग है अट है, उसमें
 ज्ञान नहीं है। ज्ञान दर्शन चैतन्य यह गुण जीव में है। स्पर्श रस
 वर्ण गंध यह पुद्गलमें है। दोनों का गुणधर्म अलग है और दोनों
 अलग २ हैं। अपने जीव हैं या पुद्गल? अपने जीव हैं।
 पुद्गल के पक्ष में पढ़ने के कारण अपनेको इस मोहनीय कर्म ने
 अपने जाल में फँसा लिया है। मोहनीय कर्म जीव का घात करता
 है; पुद्गलके पक्ष में पढ़े तो जीव का घात होता है; जीव के
 पक्ष में पढ़े तो पुद्गल का घात होता है। अरन तो जीव हैं।
 इसलिये जीव का कल्याण होना, जीव को अनन्त सुख में पहुँ-
 चाना, मोक्षको जाना, यह सब जीवमें होता है। पुद्गल मोक्ष

में नहीं जाता है । इतना समझने पर भी यह सब अग मूल भटक रहा है, पंच पापों में पड़ा हुआ है और उसमें दर्शन मोहनीय कर्म के उदय ने सम्यक्त्व का घात किया है; चारित्र्य मोहनीय कर्म के उदयने संयम का घात किया है । इस प्रकार इन दोनों कर्मों ने अनन्त काल से जीव का घात किया है । फिर अपने को कराना क्या चाहिए ?

सुखप्रति जिसको करने की इच्छा हो उस जीव को हमारा आदेश इतना ही है कि दर्शन मोहनीय कर्म का नाश करके सम्यक्त्व प्राप्त करो । चारित्र्य मोहनीय कर्म का नाश करो, संयम की धारण करो । इन दो मोहनीय कर्मों का नाश कर अपना आत्म-कल्याण करो, यह हमारा आदेश है, यह हमारा उपदेश है, सर्व जीवों की यही उपदेश है । अनन्त काल से यह जीव संसार में परिभ्रमण कर रहा है । किस कारण से ? एक मिथ्यात्व कर्म के उदय से । अपना कल्याण किससे होगा ? इस मिथ्यात्व कर्म के नाश से । अतः उसका नाश अवश्य करना चाहिये । सम्यक्त्व प्राप्ति कर लेना चाहिए । सम्यक्त्व किसे कहते हैं, इसे कुन्दकुन्द-स्वामी ने समयसार, प्रवचनसार, नियमसार, पंचास्तिकाय, अष्ट-पाहुड और गोमटसारादि बड़े २ ग्रन्थों में वर्णन किया है । पर इसपर श्रद्धा रखता कौन ? अपना आत्मकल्याण करने वाला रखेगा । और इसी तरह संसार में भ्रमण करना है तो वह भ्रमण करता आ ही रहा है, उसका उपाय नहीं । परन्तु ऐसा करना उचित नहीं, यह हमारा आदेश है; उपदेश है । ओं सिद्धाय नमः ।

फिर आपको क्या करना चाहिये ? दर्शनमोहनीय कर्मका शय करना चाहिये । किससे उसका क्षय होता है ? एक आत्म-चित्तन से होता है । कर्म निर्जरा किससे होती है ? आत्मचित्तनसे होती है । तीर्थयात्रा करने पर पुण्यबंध होता है । प्रत्येक धर्म-कार्य करने पर पुण्यबंध होता है । कर्म-निर्जरा होने के लिये आत्मचित्तन साधन है । अनन्तकर्मों की निर्जरा के लिये आत्म-चित्तन ही साधन है । आत्मचित्तन किये बिना कर्मोंकी निर्जरा होती नहीं; केवलज्ञान होता नहीं, केवलज्ञान के बिना मोक्षप्राप्ति नहीं होती है । फिर अपने को क्या करना चाहिये ? चौबीस घण्टोंमें छह घड़ी उत्कृष्ट कही गई है, चार घड़ी मध्यम कही गई है, दो घड़ी अधम्य कही गई है । जितना समय मिले उतना समय आत्मचित्तन करे । कमसे-कम १०, १५ मिनट तो करे । कमसे-कम हमारा कहना है कि पांच मिनट तो करे । आत्मचित्तन किये बिना सम्यक्त्व-प्राप्ति नहीं होती है । सम्यक्त्वके बिना कर्मोंका संसार-बंधन टूटता नहीं, जन्म-जरा-मरण छूटता नहीं । आगे सम्यक्त्व होने पर संयम के पीछे लगना चाहिए । यह चारित्र्य मोहनीय कर्मका उदय है कि सम्यक्त्व होकर ६६ सागर तक रहता है, परन्तु मोक्ष नहीं होता । क्यों ? चारित्र्यमोहनीय कर्म का उदय होने से । इसलिये चारित्र्यमोहनीय कर्म का क्षय करने के लिये संयम को ही धारण करना चाहिये । संयमके बिना चारित्र्य-मोहनीय कर्म का नाश नहीं होता । इसीलिये यह संयम कैसा भी हो, परन्तु संयम धारण करना चाहिये, इसी मत, संयम धारण करने

के लिये ढरो मत । संयम धारण किये बिना सातवां गुणस्थान नहीं होता है । सातवें गुणस्थान के बिना आत्मानुभव नहीं होता है । आत्मानुभव के बिना कर्मों की निर्जरा नहीं होती । कर्मों की निर्जरा के बिना केवलज्ञान नहीं होता । ओं सिद्धाय नमः ।

निर्विकल्प समाधि, सविकल्प समाधि, इस प्रकार समाधि के दो भेद कहे गये हैं । गृहस्थजन—कपडों में रहने वाले—सविकल्प समाधि करेंगे । मुनियों के सिवाय निर्विकल्प समाधि होती नहीं है । वस्त्र छोड़े बिना मुनिपद नहीं होता । भाईयो, ढरो मत, मुनिपद धारण करो, यथार्थ संयम हुए बिना निर्विकल्प समाधि होने पर ही सम्यक्त्व होता है । इस प्रकार समयसारमें कुंदकुंद-स्वामीने कहा है । आत्मानुभवके बिना सम्यक्त्व नहीं होता है । व्यवहारसम्यक्त्वको उपचार कहा है । यह यथार्थ सम्यक्त्व नहीं है, यह साधन है । जिस प्रकार फल आने के लिये फूल कारण है, उसी प्रकार व्यवहार सम्यक्त्व कहा है । वह यथार्थ सम्यक्त्व नहीं । यथार्थ सम्यक्त्व कब होता है ? आत्मानुभव होने के बाद होता है । आत्मानुभव कब होता है ? निर्विकल्प समाधि होने पर होता है । निर्विकल्प समाधि कब होती है ? मुनिपद धारण करनेपर ही होती है । निर्विकल्प समाधि का प्रारम्भ कब होता है ? सातवें गुणस्थानसे प्रारम्भ होता है और बारहवें गुणस्थान में पूर्ण होता है; तेरहवें गुणस्थान में केवलज्ञान होता है, इस प्रकार निबन्ध है । शास्त्रोंमें ऐसा लिखा है । इसलिये आप ढरो मत । ढरो मत । संयम धारण करो, सम्यक्त्व धारण करो, ये आपके कल्याण

करने वाले हैं। इनके सिवाय कल्याण होता नहीं। संयम के बिना कल्याण नहीं होता है। आत्मचित्तन के बिना कल्याण नहीं होता है। पुद्गल और जीव अलग २ हैं, यह पक्का समझना। तुमने साधारण समझ रखा है, यथार्थ अभी समझ में आया नहीं। यथार्थ समझ में आया होता तो इस पुद्गल के मोह में तुम क्यों पड़ते ?। संसार में बाल-बच्चे, भाई-बन्धु, माता-पिता, ये सब पुद्गल के संबंधसे होने वाले हैं। जीव के सम्बन्धवाले कोई नहीं रे भाई ! जीव अकेला ही जानेवाला है। मोक्ष को भी अकेला जानेवाला है।

देवपूजा, गुरुपारित, स्वाध्याय, संयम तप और दान ये छह क्रिया कही गई है। असि मसि कृषि वाणिज्य शिष्य विद्या, ये छह आरंभ कहे गये हैं। इन छह आरम्भजनित कर्मों को क्षय करने के लिये छह क्रियाओं को करने की आवश्यकता है। यह व्यवहार हुआ। उससे यथार्थमें मोक्ष नहीं होता; ऐहिक सुख मिलेगा, पंचेन्द्रिय सुख मिलेगा, परन्तु मोक्ष नहीं मिलेगा। मोक्ष किससे मिलता है ? मोक्ष केवल आत्मचित्तनसे ही मिलता है। बाकी किसी भी कर्म से, क्रिया से कार्य से और किसी कारण से मोक्ष नहीं मिलता।

नय, शास्त्र, अनुभव इन तीनोंके समन्वय से विचार करो कि मोक्ष किससे मिलता है। बाकी सब रहने दो, अपना अनुभव क्या ? भगवानकी वाणी के सामने उसका कोई मूल्य नहीं है, वाणी सत्य है। उस वाणीपर पूर्ण विश्वास रखना चाहिए। उस

वाणी के एक शब्द सुनने पर एक शब्द से ही जीव तिर कर मुक्ति को जायेगा ऐसा नियम है । सत्य वाणी कौनसी है ? एक आत्मचिन्तन । आत्मचिन्तनसे सर्व कार्य सिद्ध होनेवाले हैं । उसके सिवाय कुछ भी नहीं रे भाई ! बाकी कोई भी क्रिया करने पर पुण्यबंध पड़ता है । स्वर्ग सुख मिलता है । संपत्ति, संतति, धनवान, स्वर्गसुख यह सब होते हैं, पर मोक्ष नहीं मिलता है । मोक्ष मिलने के लिये केवल आत्मचिन्तन है तो वह कार्य करना ही चाहिए । उसके विना सद्गति नहीं होती, यह क्रिया करनी चाहिये ।

सारांश धर्मस्य मूळं दया । जिनधर्मका मूळ क्या है ? सत्य, अहिंसा । मुख से सभी सत्य, अहिंसा बोलते हैं, पालते नहीं । मुख से रसोई करो, भोजन करो, 'रसोई करो भोजन करो' कहने से पेट भरेगा क्या ? क्रिया किए विना—भोजन किए विना—पेट नहीं भरता है बाबा । इसलिए क्रिया करने की आवश्यकता है । क्रिया करनी चाहिए, तब अपना कार्य सिद्ध होता है । बाकी सब कार्य छोड़ो, सत्य—अहिंसा का पालन करो । सत्यमें सम्यक्त्व आ जाता है । अहिंसामें किसी जीव को दुख नहीं दिया जाता । अतः संयम होता है । यह व्यावहारिक बात है, इस व्यवहार का पालन करो । सम्यक्त्व धारण करो, संयम धारण करो, तब आपका कल्याण होगा । इसके विना कल्याण नहीं होगा ।

[अब बात]

अंतिम अक्षर संदेश

[ध्वनिमुद्रित रूपदेश]

ओं जिनाय नमः । ओं विनाय नमः । ओं अष्ट
सिद्धाय नमः । पांच भरत पांच ऐरावतस्य मृतभदिव्य
तीसचोवीसो मगवान् जिनाय नमो नमः । तीस चोवीस-
भगवान् जिनाय नमः । सीमंभरादि बीस तीर्थकर भग-
वान् जिनाय नमः । ऋषमादि महावीरपयते चौदाशे
बावळ गणधर देवाय नमो नमः । चारणक्रद्धिधारी मुनी-
श्वरेभ्यो नमोनमः चौसठ ऋद्धिधारी मुनीश्वराय नमो
नमः । अंतकृतकेवळिभ्यो नमो नमः । प्रत्येक तीर्थकरावर
दशदश घोरोपसर्गाविजयी मुनीश्वराय नमो नमः ।

(मराठीमध्ये बोलू-हां-चालू आडे कां !)

अक्षरा भंग चौदा पूर्व शाख महासमुद्र आडे
त्याचा वर्णन करणारे आज कोणी श्रुतकेवळी नाही,
श्रुतकेवळी त्याचा वर्णन करणारा आहे. केवळी वर्णन
करणार आहे. आमच्यासारखे क्षुद्र मनुष्य काय वर्णन
करतो. सर्वच लोकांच्या हा आपल्या आत्म्याचा
कल्याण करणारा आहे. जिनवाणी सरस्वती श्रुतदेवी
हा अनंत समुद्राइतक्या आहे. तर त्याच्यामध्ये जिन-
धर्म हा कोणते जीव धारण करेल त्या जीवाचा कल्याण
अवश्य होतो. अनंत मुखामध्ये त्याची प्राप्ति होऊन
मोक्षप्राप्ति करून घेतो. असे नियम आहे. अनंत
मंमामध्ये एक अक्षर एक ओं अक्षर एक अक्षर ओं

अक्षर इतका धारण केला तर सुद्धा त्या जीवाचा कल्याण होतो. सम्भेद शिखरामध्ये दोन बंदर लढत होते. णमोकार मंत्राणसून स्वर्गाला गेले. शेठी सुदर्शन बैलाला उपदेश दिला. स्वर्गामध्ये गेरा. जो सप्त-व्यसनधारी भंजनाचोर होणारा तो णमोकार मंत्राच्या उपदेशाने स्वर्गाला गेला. मोक्षाला गेला. भरे हे तर सोडा, कुत्ता मडा नीच जातोचा, जीवंधर मुनीने कुमारने उपदेश दिला. देवगति झाला. इतका माईमा जिनधर्माचा आहे. परंतु कोणी धारण करत नाही, जेना होकर सुद्धा जिनधर्मावर विश्वास नाही. अनंत कालाससून जीव पुद्गल दोन्ही भिन्न आहे. हा सध अग सगळे जाणतो. परंतु विश्वास नाही करत. पुद्गल अलग आहे. जीव अलग आहे. तर दोन्ही भिन्न अहून आपण जीव आहे का पुद्गल आहे हा विचार करावा. आपण तर जीव आहे, पुद्गल नाही. पुद्गल आहे अलग आहे. जड आहे. त्याच्यात ज्ञान नाही. ज्ञानदर्शन चैतन्य गुण हा जीवामध्ये आहे. स्पर्श रस वण गंध हा पुद्गलमध्ये आहे. दोन्हीच गुणधर्म अलग आहे व दोन्ही अलग अलग आहे. आपण जीव का पुद्गल ? आपण जीव आहे. पुद्गलाच्या पाटी पडून हा माईनाय कर्म आपणाला वेडून घेतलेला आहे. मोईनीय कर्म जीवाचा घात करतो. पुद्गलाच्या पशाळा पडला तर जीवाचा घात होतो. जीवाच्या

बघाळा पडला तर पुद्गलाचा घात होतो, आपण तर जीव आडे. तर जीवाचे बह्याण होणे, अनंत सुखांत पोचविणे मोक्षास जीव जाणे, जीवाला होतो. पुद्गलच मोक्षाचा नाही घात. हतका समजून हा लोक सगळा जग सगळा मुळत गेलेला आहे. पंच पापात पडलेला आहे. आणखी यात हा दर्शन मोडनीय कर्माच्या उदयाने सुम्बत्वाचा घात केलेला आहे. चारित्र मोडनीय कर्माच्या उदयाने संयमाचा घात केलेला आहे. ह्या जीवाचा दान्डी कर्म घात केलेला आहे अनंत कालागामून. तर आपण काय केल पाहिजे ?

सुखप्राप्ति जवळ आहे इच्छा असेल तो जीव, आमचा आदेश इतकाच आहे की दर्शन मोडनीय कर्माचा नाश करावा, सुम्बत्त्व प्राप्ति करून घ्यावा. (द'घद'वास) चारित्र मोडनीय कर्माचा नाश करावा संयम धारण करावा. ह्या दोन कर्मांचा मोडनीय दोन मोडनीयचा नाश करावा आणि आपला आपबह्याण करावा. हे आपचा आदेश हे आमचे उपदेश आहे. सर्व जीवाला हेच आहे. अनंत कालापासून हा जीव फिरत आलेला आहे. कशा कारणाने ? एक मिथ्याकर्माच्या उदयाने फिरत आलेला आहे. तर आपले बह्याण बघाने दोईल ? या मिथ्या कर्माचा नाश पाहले केला पाहिजे. सुम्बत्त्व प्राप्ति सुम्बत्त्व म्हणजे काय हा !

कुंदकुंद स्वामीने समयप्रार, प्रवचनसार, नियमसार, पंचास्तिकाय, अष्टपाहुड, भाणस्त्री गोमटसारादि बडे बडे ग्रंथांमध्ये वर्णन केलेले आहे. पण याच्यावर श्रद्धा ठेवतो कोण ? आपला आत्मकल्याण करणारा तो ठेवेल. आणि असेच जर संसारांमध्ये फिरण्याचे असेल तर फात आलेलाच आहे. त्याला उपाय नाही. पण असे करू नये. हा आमचा आदेश आहे. उपदेश आहे. श्री सिद्धाय नमः ।

आपण काय केले पाहिजे ? दर्शन मोहनीय कर्मांचा क्षय केला पाहिजे. कशाने क्षय होतो ? आत्म-चित्तनाने होतो. कर्मनिर्जरा कशाने होतो ? आत्म-चित्तनाने होतो. दानरूपा सगळे केले तर पुण्यबंध पडतो. तीर्थयात्रा केले तर पुण्यबंध पडतो. इरेक धर्माचे कार्य केलेतर पुण्यबंध पडतो. कर्मनिर्जरा होण्याला आत्मचित्तनच साधन आहे. केवलज्ञान होण्याला आत्मचित्तनच साधन आहे. हा अनंत कर्मांचा निर्जरा होण्याला आत्मचित्तनच साधन आहे. आत्म्याचा ध्यान केल्याशिवाय कर्मांचा निर्जरा होत नाही. केवल-ज्ञान होत नाही, केवलज्ञानाशिवाय मोक्षप्राप्ति होत नाही. तर आपण काय केले पाहिजे. चोवीस भंटेमध्ये ६ घडी उत्कृष्ट सांगितलेले आहे. ४ घडी मध्यम सांगितलेले आहे. दोन घडी अधन्य सांगितलेले आहे. जितके वेळ मिळेल तितके करावा. निदानला १०।१५

(5)

मिनिट तरी करावा. निदानला आपचे वृजणे पांच
मिनिट तरी करावा. आत्मचित्तन करावा. आत्मचित्तन
केव्हाशिवाय सम्यक्त्वप्राप्ति होत नाही. सम्यक्त्वा-
शिवाय कर्मांचा संसारबंध तुटत नाही. जन्म जरा
मरग हा तुटत नाही. सम्यक्त्वाशिवाय, पुढे सम्यक्त्व
शास्त्रानंतर संयमाचा पाटी लागला पाहिजे. हा चारित्र
मोहनीय कर्मांचा उदय आहे. सम्यक्त्व होऊन दूद
सागरपर्यंत राहिल, मोक्ष होत नाही. कां ? चारित्र
मोहनीय कर्मांचा उदय असल्याकारणाने. तर चारित्र
मोहनीय कर्मांचा क्षय करण्याकरिता संयमच धारण
करायला पाहिजे. हरेक जीवाने संयम धारण करायलाच
पाहिजे. संयमाशिवाय चारित्र मोहनीय कर्मांचा क्षय
होत नाही. तर हा संयम कसे मी असो पण संयम
धारण करायला पाहिजे. मिवू नका ! संयम धारण करा-
यला मिळू नका. संयम धारण केव्हाशिवाय सातवे
गुणस्थान होत नाही. कर्पेच्यात सातवे गुणस्थान होत
नाही. सातव्या गुणस्थानाशिवाय आत्माचा अनुभव
येत नाही. आत्म्याचा अनुभवाशिवाय कर्मांचा निर्बरा
होत नाही. कर्मांच्या निर्बराशिवाय केवलज्ञान होत नाही.
'ओ सिद्धाय नमः ।

निर्विकल्प समाधि, सविकल्प समाधि दोन भेद
सांगितलेले आहे. गृहस्थी कपडेमध्ये करणारे सवि-
कल्प समाधि काठीळ. मुनिशिवाय निर्विकल्प समाधि

होत नाही. मुनी कपडा काढल्याशिवाय मुनिपद
येत नाही. बाबानो भिरू नका. मुनी पदवी धारण
करा, बगेबर संयम शास्त्राशिवाय निर्विकल्प समाधि
होत नाही. निर्विकल्प समाधि होत नाही. निर्विकल्प
समाधि झाला तरच सम्यक्त्व होतो. असे समयसागमध्ये
कुंदांद स्वामींनी सांगितलेले आहे. आत्मानुभवशिवाय
सम्यक्त्व होत नाही. उपचार सांगितलेला आहे व्यक्-
तार सम्यक्त्व. हा खरा सम्यक्त्व नाही आहे. हा साधन
आहे. फक्त येण्याला फूलांन जमे कारण अडे तद्गत
व्यक्तर सम्यक्त्व सांगितलेला आहे. स्वयं सम्यक्त्व
नाही. स्वयं सम्यक्त्व केव्हा होईल. आत्म अनुभव
झाल्यानंतर होतो. आत्मानुभव केव्हा होईल. निर्विकल्प
समाधि शास्त्रानंतर होतो. निर्विकल्प समाधि केव्हा
होतो ? मुनिपदवी धारण केल्यानंतरच होतो. निर्वि-
कल्प समाधि केव्हा सुरू होतो ? सातवे गुणस्थाना-
पासून आरंभ होतो. बारावें गुणस्थानाला पूर्ण होतो.
तेरावे गुणस्थानाला केवळज्ञान होतो असे नियम आहे.
शास्त्रामध्ये असे लिहिलेले आहे. तर धारण भिरू नका !
का ? संयम धारण करा, सम्यक्त्व धारण करा. हे आपले
कल्याण करणारे आहेत. त्यांच्याशिवाय कल्याण होत
नाही. आत्मचिंतनाशिवाय कल्याण होत नाही. पुद्गल
आणि जीव अलग भिन्न आहे. हा पक्का समजा.
तुम्हाला सामान्य समजतो. खरे समजत नाही अजून-

खरे अर संपन्न असावा तरं ह्या पुद्गलाचे मोशाला
 कशात दुःखी पड्या असता. मुले बाळे आईंबु मुले-
 बाळे आईंभार हे सगळे पुद्गलाचे संबंधवाले आहेत,
 जीवाचे संबंधवाळे कोणी नाही रे बाबा. । जीव अकेला
 आहे. अकेला आहे. ह्या जीवाचा कोणी नाही. कित्येक
 भवभ्रवानमध्ये अकेला जाणार आहे. मोशाला ही [अकेला
 जाणार आहे.]

देवदूता गुह्यरासित स्वाध्याय संयम तप आणि दान
 हा सदा क्रिया झालेला आहे. सांगितलेला आहे.
 [साकला] अति मति कृषि वाणिज्य शिल्प विद्या
 हा सदा धंदा सांगितलेला आहे. हा सदा धंदाचे क्षय
 कण्याकृति हा सदा क्रिया करायला पाहिजे. हा
 व्यावहार झाला. ह्याच्यापासून खरे मोक्ष होत नाही.
 ऐदिक सुख मिळेल. पंचपाप त्याग करेव्याने पंचेद्रय
 सुख मिळेल. हा मोक्ष नाही मिळत. मोक्ष कशाने
 मिळतो. बाकी कोणते कर्माने कोणते क्रियाने कोणते
 कार्याने कोणते कारणाने. [मोक्ष नाही मिळत]

नय शास्त्र अनुभव ह्या तीर्थांचे मंत्र पाठव
 घ्यावा म्हणजे कशाने मोक्ष मिळतो. बाकी सगळे
 कसू दे आपला अनुभव कगला । भगवानक्या वागीपुढे
 वादी किमत नाही. सरमवाणी आहे. वाणीवर एव
 विश्वास ठेवला पाहिजे. हा वाणीचे एक शब्द ऐकजे
 तर एक शब्दाने जीव सखंन मुक्तीला जाईल तसे
 नियम आहे. तरी ह्या वागीमध्ये विश्वास ठेवावा.

सत्यवाणी कोणता आहे ? एक आत्मचित्तन. आत्म-
चित्तनापातून सगळे कार्य साध्य होणार आहे, त्याच्या-
शिवाय काही नाही रे बाबा ! बाकी काही क्रिया केला
तर पुण्यबंध पडतो, स्वर्गसुख मिळतो, राज्यपदवी
मिळतो, संपत्तिवान होतो. संतति संपत्ति धनवान्
हा सगळे मिळतो. पण मोक्ष नाही मिळत. मोक्ष
मिळण्याला फक्त एक आत्मचित्तन आहे, तर ते कार्य
करायलाच पाहिजे, त्याच्याशिवाय हा सद्गति
[लोकला] सद्गति होत नाही. हा क्रिया
केलाच पाहिजे.

सारांश, धर्मस्य मूलं दया, जिनधर्माचा मूल
कोणता ? सत्य अहिंसा. अरे तोंडाने सर्व सत्य अहिंसा
श्रुणता पाळत नाही. तोंडाने स्वयंपाक करावा भोजन
करावा स्वयंपाक करावे भोजन म्हटले (म्हटलेतर) पोट
भरतो काय ? क्रिया केल्याशिवाय जेवल्याशिवाय पोट
भरत नाही रे बाबा ! तर क्रियामध्ये आणला पाहिजे
क्रिया केले पाहिजे. तेव्हा आपले कार्य साध्य होऊन
जाते. बाकी सगळे काम सोडा. सत्य अहिंसा पाळा.
सत्यामध्ये सम्यक्त्व येतो. अहिंसामध्ये कोणत्याही
जीवाला दुःख नाही देता. हा व्यावहारिक, व्यावहारिक
गोष्ट आहे, हा व्यवहारिक पाळा. सम्यक्त्व धारण
करा. संयम धारण करा तर आपला कल्याण होतो.
त्याच्याशिवाय कल्याण होत नाही.

[आता पुढे]

सदस्योंको अपूर्व लाभ

❀ इस सुसंधिसे लाभ उठाईये ❀

।सो सदस्योंको यह जानकर अत्यंत हर्ष होगा कि श्री
भाचार्य कुटुंबसागर प्रथमांशसे इस समय महर्षि विद्याभंड, स्वामी
शिखिभू श्री उत्तार्यश्लोकवार्तिकाभंडकार प्रथमांश श्रीनकाश दार्शनिक
शिशोभनि वः भागिकचंद्रमी म्यायाचार्य द्वारा शिखिभू
द्विती टीकाके साथ प्रकाशित हो रहा है । यह प्रथम एक मात्र कोक
प्रमाण बहुत विस्तृत रूपसे लिखा गया है । पहले ४ खंडों
प्रथमांशके पूर्ण हुआ है । ४ खंड प्रकाशित हो चुके हैं । अब ५
खंड और प्रकाशित होंगे । प्रथमांशके सदस्योंको पूर्ण प्रकाशित
प्रथम व प्रकृत प्रथमांशके समस्त खंड मंत्र रूपसे दिए जायेंगे । सो
प्रथमांशके सदस्य बनकर इस सुसंधिसे अवश्य लाभ उठाव ।

विनीत

वर्षमान पार्श्वनाथ शास्त्री

श्री भाचार्य कुटुंबसागर प्रथमांश, सोलापुर.